Vidya Bhawan balika Vidyapeeth. shakti utthan aashram Lakhisarai

Date:- 08/01/21. Class-8 F

Class teacher – Anant kumar

Co-curricular Activities

(स्वामी विवेकानंद की जीवनी)

	नरेंद्रनाथ दत्त
	12 जनवरी 1863
	कलकत्ता
जन्म	**(अब कोलकाता)**

मृत्यु	4 जुलाई 1902 (उम्र 39) बेलूर मठ, बंगाल रियासत, ब्रिटिश राज (अब बेलूर, पश्चिम बंगाल में)
गुरु/शिक्षक	श्री रामकृष्ण परमहंस
दर्शन	आधुनिक वेदांत, राज योग
साहित्यिक कार्य	राज योग, कर्म योग, भक्ति योग, ज्ञान योग,माई मास्टर
कथन	"उठो, जागो और तब तक नहीं रुको जब तक मंजिल प्राप्त न हो जाये"

स्वामी विवेकानन्द (जन्म: १२ जनवरी,१८६३ - मृत्यु: ४ जुलाई,१९०२) वेदान्त के विख्यात और प्रभावशाली आध्यात्मिक गुरु थे। उनका वास्तविक नाम नरेन्द्र नाथ दत्त था। उन्होंने अमेरिका स्थित शिकागो में सन् १८९३ में आयोजित विश्व धर्म महासभा में भारत की ओर से सनातन धर्म का प्रतिनिधित्व किया था। भारत का वेदान्त अमेरिका और यूरोप के हर एक देश में स्वामी विवेकानन्द की वक्तृता के कारण ही पहुँचा। उन्होंने रामकृष्ण मिशन की स्थापना की थी जो

आज भी अपना काम कर रहा है। वे रामकृष्ण परमहंस के सुयोग्य शिष्य थे। उन्हें प्रमुख रूप से उनके भाषण की शुरुआत " मेरे अमेरिकी भाइयों एवं बहनों " के साथ करने के लिए जाना जाता है । उनके संबोधन के इस प्रथम वाक्य ने सबका दिल जीत लिया था।

स्वामी विवेकानंद का जीवनवृत्त

स्वामी विवेकानन्द का जन्म १२ जनवरी सन् १८६3 को कलकत्ता में हुआ था। इनका बचपन का नाम नरेन्द्रनाथ था। इनके पिता श्री विश्वनाथ दत्त कलकत्ता हाईकोर्ट के एक प्रसिद्ध वकील थे। उनके पिता पाश्चात्य सभ्यता में विश्वास रखते थे। वे अपने पुत्र नरेन्द्र को भी अँग्रेजी पढ़ाकर पाश्चात्य सभ्यता के ढर्रे पर चलाना चाहते थे। इनकी माता श्रीमती भुवनेश्वरी देवीजी धार्मिक विचारों की महिला थीं। उनका अधिकांश समय भगवान् शिव की पूजा-अर्चना में व्यतीत होता था। नरेन्द्र की बुद्धि बचपन से बड़ी तीव्र थी और परमात्मा को पाने की लालसा भी प्रबल थी। इस हेतु वे पहले 'ब्रह्म समाज' में गये किन्तु वहाँ उनके चित्त को सन्तोष नहीं हुआ। वे वेदान्त और योग को पश्चिम संस्कृति में प्रचलित करने के लिए महत्वपूर्ण योगदान देना चाहते थे।

दैवयोग से विश्वनाथ दत्त की मृत्यु हो गई। घर का भार नरेन्द्र पर आ पड़ा। घर की दशा बहुत खराब थी। अत्यन्त दरिद्रता में भी नरेन्द्र बड़े अतिथि-सेवी थे। स्वयं भूखे रहकर अतिथि को भोजन कराते, स्वयं बाहर वर्षा में रात भर भीगते-ठिठुरते पड़े रहते और अतिथि को अपने बिस्तर पर सुला देते।

स्वामी विवेकानन्द अपना जीवन अपने गुरुदेव श्रीरामकृष्ण को समर्पित कर चुके थे। गुरुदेव के शरीर-त्याग के दिनों में अपने घर और कुटुम्ब की नाजुक हालत की चिंता किये बिना, स्वयं के भोजन की चिंता किये बिना वे गुरु-सेवा में सतत संलग्न रहे। गुरुदेव का शरीर अत्यन्त रुग्ण हो गया था।

विवेकानंद बड़े स्वपन्द्रष्टा थे। उन्होंने एक नये समाज की कल्पना की थी, ऐसा समाज जिसमें धर्म या जाति के आधार पर मनुष्य-मनुष्य में कोई भेद नहीं रहे। उन्होंने वेदांत के सिद्धांतों को इसी रूप में रखा। अध्यात्मवाद बनाम भौतिकवाद के विवाद में पड़े बिना भी यह कहा जा सकता है कि समता के सिद्धांत की जो आधार विवेकानन्द ने दिया, उससे सबल बौद्धिक आधार शायद ही ढूंढा जा सके। विवेकानन्द को युवकों से बड़ी आशाएं थीं। आज के युवकों के लिए ही इस ओजस्वी संन्यासी का यह जीवन-वृत्त लेखक उनके समकालीन समाज एवं ऐतिहासिक पृष्ठभूमि के संदर्भ में उपस्थित करने का प्रयत्न किया है यह भी प्रयास रहा है कि इसमें विवेकानंद के सामाजिक दर्शन एव उनके मानवीय रूप का पूरा प्रकाश पड़े

स्वामी विवेकानंद का बचपन

बचपन से ही नरेन्द्र अत्यंत कुशाग्र बुद्धि के और नटखट थे। अपने साथी बच्चों के साथ तो वे शरारत करते ही थे, मौका मिलने पर वे अपने अध्यापकों के साथ भी शरारत करने से नहीं चूकते थे। नरेन्द्र के घर में नियमपूर्वक रोज पूजा-पाठ होता था धार्मिक प्रवृत्ति की होने के कारण माता भुवनेश्वरी देवी को पुराण, रामायण, महाभारत आदि की

कथा सुनने का बहुत शौक था। कथावाचक बराबर इनके घर आते रहते थे। नियमित रूप से भजन-कीर्तन भी होता रहता था। परिवार के धार्मिक एवं आध्यात्मिक वातावरण के प्रभाव से बालक नरेन्द्र के मन में बचपन से ही धर्म एवं अध्यात्म के संस्कार गहरे पड़ गए। माता-पिता के संस्कारों और धार्मिक वातावरण के कारण बालक के मन में बचपन से ही ईश्वर को जानने और उसे प्राप्त करने की लालसा दिखाई देने लगी थी। ईश्वर के बारे में जानने की उत्सुक्ता में कभी-कभी वे ऐसे प्रश्न पूछ बैठते थे कि इनके माता-पिता और कथावाचक पंडितजी तक चक्कर में पड़ जाते थे।

गुरु के प्रति निष्ठा

एक बार किसी ने गुरुदेव की सेवा में घृणा और निष्क्रियता दिखायी तथा घृणा से नाक-भौं सिकोड़ीं। यह देखकर स्वामी विवेकानन्द को क्रोध आ गया। उस गुरु भाई को पाठ पढ़ाते और गुरुदेव की प्रत्येक वस्तु के प्रति प्रेम दर्शाते हुए उनके बिस्तर के पास रक्त, कफ आदि से भरी थूकदानी उठाकर फेंकते थे। गुरु के प्रति ऐसी अनन्य भक्ति और निष्ठा के प्रताप से ही वे अपने गुरु के शरीर और उनके दिव्यतम आदर्शों की उत्तम सेवा कर सके। गुरुदेव को वे समझ सके, स्वयं के अस्तित्व को गुरुदेव के स्वरूप में विलीन कर सके। समग्र विश्व में भारत के अमूल्य आध्यात्मिक भंडार की महक फैला सके। उनके इस महान व्यक्तित्व की नींव में थी ऐसी गुरुभक्ति, गुरुसेवा और गुरु के प्रति अनन्य निष्ठा!

शिकागो धर्म महा सम्मलेन भाषण

अमेरिकी बहनों और भाइयों,

आपने जिस सौहार्द और स्नेह के साथ हम लोगों का स्वागत किया हैं, उसके प्रति आभार प्रकट करने के निमित्त खड़े होते समय मेरा हृदय अवर्णनीय हर्ष से पूर्ण हो रहा हैं। संसार में संन्यासियों की सब से प्राचीन परम्परा की ओर से मैं आपको धन्यवाद देता हूँ; धर्मों की माता की ओर से धन्यवाद देता हूँ; और सभी सम्प्रदायों एवं मतों के कोटि कोटि हिन्दुओं की ओर से भी धन्यवाद देता हूँ।

मैं इस मंच पर से बोलनेवाले उन कतिपय वक्ताओं के प्रति भी धन्यवाद ज्ञापित करता हूँ, जिन्होंने प्राची के प्रतिनिधियों का उल्लेख करते समय आपको यह बतलाया हैं कि सुदूर देशों के ये लोग सहिष्णुता का भाव विविध देशों में प्रचारित करने के गौरव का दावा कर सकते हैं। मैं एक ऐसे धर्म का अनुयायी होने में गर्व का अनुभव करता हूँ, जिसने संसार को सहिष्णुता तथा सार्वभौम स्वीकृति, दोनों की ही शिक्षा दी हैं। हम लोग सब धर्मों के प्रति केवल सहिष्णुता में ही विश्वास नहीं करते, वरन् समस्त धर्मों को सच्चा मान कर स्वीकार करते हैं। मुझे ऐसे देश का व्यक्ति होने का अभिमान हैं, जिसने इस पृथ्वी के समस्त धर्मों और देशों के उत्पीड़ितों और शरणार्थियों को आश्रय दिया हैं। मुझे आपको यह बतलाते हुए गर्व होता हैं कि हमने अपने वक्ष में यहूदियों के विशुद्धतम अवशिष्ट को स्थान दिया था, जिन्होंने दक्षिण भारत आकर उसी वर्ष शरण ली थी, जिस वर्ष

उनका पवित्र मन्दिर रोमन जाति के अत्याचार से धूल में मिला दिया गया था । ऐसे धर्म का अनुयायी होने में मैं गर्व का अनुभव करता हूँ, जिसने महान् जरथुष्ट्र जाति के अवशिष्ट अंश को शरण दी और जिसका पालन वह अब तक कर रहा हैं। भाईयो, मैं आप लोगों को एक स्तोत्र की कुछ पंक्तियाँ सुनाता हूँ, जिसकी आवृति मैं बचपन से कर रहा हूँ और जिसकी आवृति प्रतिदिन लाखों मनुष्य किया करते हैं:

रुचिनां वैचित्र्यादृजुकुटिलनानापथजुषाम् । नृणामेको गम्यस्त्वमसि पयसामर्णव इव ।।

–'जैसे विभिन्न नदियाँ भिन्न भिन्न स्रोतों से निकलकर समुद्र में मिल जाती हैं, उसी प्रकार हे प्रभो! भिन्न भिन्न रुचि के अनुसार विभिन्न टेढ़े-मेढ़े अथवा सीधे रास्ते से जानेवाले लोग अन्त में तुझमें ही आकर मिल जाते हैं।'

यह सभा, जो अभी तक आयोजित सर्वश्रेष्ठ पवित्र सम्मेलनों में से एक हैं, स्वतः ही गीता के इस अद्भुत उपदेश का प्रतिपादन एवं जगत् के प्रति उसकी घोषणा हैं:

ये यथा मां प्रपद्यन्ते तांस्तथैव भजाम्यहम् । मम वर्त्मानुवर्तन्ते मनुष्याः पार्थ सर्वशः ।।

–'जो कोई मेरी ओर आता हैं - चाहे किसी प्रकार से हो - मैं उसको प्राप्त होता हूँ। लोग भिन्न मार्ग द्वारा प्रयत्न करते हुए अन्त में मेरी ही ओर आते हैं।'

साम्प्रदायिकता, हठधर्मिता और उनकी बीभत्स वंशधर धर्मान्धता इस सुन्दर पृथ्वी पर बहुत समय तक राज्य कर चुकी हैं। वे पृथ्वी को हिंसा से भरती रही हैं, उसको बारम्बार मानवता के रक्त से नहलाती रही हैं, सभ्यताओं को विध्वस्त करती और पूरे पूरे देशों को निराशा के गर्त में डालती रही हैं। यदि ये बीभत्स दानवी न होती, तो मानव समाज आज की अवस्था से कहीं अधिक उन्नत हो गया होता । पर अब उनका समय आ गया हैं, और मैं आन्तरिक रूप से आशा करता हूँ कि आज सुबह इस सभा के सम्मान में जो घण्टाध्वनि हुई हैं, वह समस्त धर्मान्धता का, तलवार या लेखनी के द्वारा होनेवाले सभी उत्पीड़नों का, तथा एक ही लक्ष्य की ओर अग्रसर होनेवाले मानवों की पारस्पारिक कटुता का मृत्युनिनाद सिद्ध हो।

यात्राएँ

२५ वर्ष की अवस्था में नरेन्द्र ने गेरुआ वस्त्र धारण कर लिये। तत्पश्चात् उन्होंने पैदल ही पूरे भारतवर्ष की यात्रा की। सन् १८९३ में शिकागो (अमेरिका) में विश्व धर्म परिषद् हो रही थी। स्वामी विवेकानन्द उसमें भारत के प्रतिनिधि के रूप में पहुँचे। योरोप-अमेरिका के लोग उस समय पराधीन भारतवासियों को बहुत हीन दृष्टि से देखते थे। वहाँ लोगों ने बहुत प्रयत्न किया कि स्वामी विवेकानन्द को सर्वधर्म परिषद् में बोलने का समय ही न मिले। एक अमेरिकन प्रोफेसर के प्रयास से उन्हें थोड़ा समय मिला किन्तु उनके विचार सुनकर सभी विद्वान चकित हो गये। फिर तो अमेरिका में

उनका अत्यधिक स्वागत हुआ। वहाँ इनके भक्तों का एक बड़ा समुदाय हो गया। तीन वर्ष तक वे अमेरिका में रहे और वहाँ के लोगों को भारतीय तत्वज्ञान की अद्भुत ज्योति प्रदान करते रहे। उनकी वक्तृत्व-शैली तथा ज्ञान को देखते हुए वहाँ के मीडिया ने उन्हें 'साइक्लॉनिक हिन्दू' का नाम दिया। [3] "आध्यात्म-विद्या और भारतीय दर्शन के बिना विश्व अनाथ हो जाएगा" यह स्वामी विवेकानन्दजी का दृढ़ विश्वास था। अमेरिका में उन्होंने रामकृष्ण मिशन की अनेक शाखाएँ स्थापित कीं। अनेक अमेरिकन विद्वानों ने उनका शिष्यत्व ग्रहण किया। ४ जुलाई सन् १९०२ को उन्होंने देह-त्याग किया। वे सदा अपने को गरीबों का सेवक कहते थे। भारत के गौरव को देश-देशान्तरों में उज्ज्वल करने का उन्होंने सदा प्रयत्न किया। जब भी वो कहीं जाते थे तो लोग उनसे बहुत खुश होते थे।

विवेकानन्द का योगदान तथा महत्व

उन्तालीस वर्ष के संक्षिप्त जीवनकाल में स्वामी विवेकानंद जो काम कर गए, वे आनेवाली अनेक शताब्दियों तक पीढ़ियों का मार्गदर्शन करते रहेंगे।

तीस वर्ष की आयु में स्वामी विवेकानंद ने शिकागो, अमेरिका में विश्व धर्म सम्मेलन में हिंदू धर्म का प्रतिनिधित्व किया और उसे सार्वभौमिक पहचान दिलवाई। गुरुदेव रवींन्द्रनाथ टैगोर ने एक बार कहा था, "यदि आप भारत को जानना चाहते हैं तो विवेकानंद को पढ़िए। उनमें आप सब कुछ सकारात्मक ही पाएँगे, नकारात्मक कुछ भी नहीं।"

रोमां रोलां ने उनके बारे में कहा था, "उनके द्वितीय होने की कल्पना करना भी असंभव है। वे जहाँ भी गए, सर्वप्रथम हुए। हर कोई उनमें अपने नेता का दिग्दर्शन करता। वे ईश्वर के प्रतिनिधि थे और सब पर प्रभुत्व प्राप्त कर लेना ही उनकी विशिष्टता थी हिमालय प्रदेश में एक बार एक अनजान यात्री उन्हें देखकर ठिठककर रुक गया और आश्चर्यपूर्वक चिल्ला उठा, 'शिव!' यह ऐसा हुआ मानो उस व्यक्ति के आराध्य देव ने अपना नाम उनके माथे पर लिख दिया हो।"

वे केवल संत ही नहीं थे, एक महान् देशभक्त, वक्ता, विचारक, लेखक और मानव-प्रेमी भी थे। अमेरिका से लौटकर उन्होंने देशवासियों का आह्वान करते हुए कहा था, "नया भारत निकल पड़े मोदी की दुकान से, भड़भूंजे के भाड़ से, कारखाने से, हाट से, बाजार से; निकल पडे झाड़ियों, जंगलों, पहाड़ों, पर्वतों से।" और जनता ने स्वामीजी की पुकार का उत्तर दिया। वह गर्व के साथ निकल पड़ी। गांधीजी को आजादी की लड़ाई में जो जन-समर्थन मिला, वह विवेकानंद के आह्वान का ही फल था। इस प्रकार वे भारतीय स्वतंत्रता-संग्राम के भी एक प्रमुख प्रेरणा-स्रोत बने। उनका विश्वास था कि पवित्र भारतवर्ष धर्म एवं दर्शन की पुण्यभूमि है। यहीं बड़े-बड़े महात्माओं व ऋषियों का जन्म हुआ, यही संन्यास एवं त्याग की भूमि है तथा यहीं—केवल यहीं—आदिकाल से लेकर आज तक मनुष्य के लिए जीवन के सर्वोच्च आदर्श एवं मुक्ति का द्वार खुला हुआ है। उनके कथन—"उठो, जागो, स्वयं जागकर औरों को जगाओ। अपने नर-जन्म को सफल करो और तब तक रुको नहीं जब तक कि लक्ष्य प्राप्त न हो जाए।"

विवेकानन्द का शिक्षा-दर्शन

स्वामी विवेकानन्द मैकाले द्वारा प्रतिपादित और उस समय प्रचलित अंग्रेजी शिक्षा व्यवस्था के विरोधी थे, क्योंकि इस शिक्षा का उद्देश्य सिर्फ बाबुओं की संख्या बढ़ाना था। वह ऐसी शिक्षा चाहते थे जिससे बालक का सर्वांगीण विकास हो सके। बालक की शिक्षा का उद्देश्य उसको आत्मनिर्भर बनाकर अपने पैरों पर खड़ा करना है। स्वामी विवेकानन्द ने प्रचलित शिक्षा को 'निषेधात्मक शिक्षा' की संज्ञा देते हुए कहा है कि आप उस व्यक्ति को शिक्षित मानते हैं जिसने कुछ परीक्षाएं उत्तीर्ण कर ली हों तथा जो अच्छे भाषण दे सकता हो, पर वास्तविकता यह है कि जो शिक्षा जनसाधारण को जीवन संघर्ष के लिए तैयार नहीं करती, जो चरित्र निर्माण नहीं करती, जो समाज सेवा की भावना विकसित नहीं करती तथा जो शेर जैसा साहस पैदा नहीं कर सकती, ऐसी शिक्षा से क्या लाभ?

स्वामी जी शिक्षा द्वारा लौकिक एवं पारलौकिक दोनों जीवन के लिए तैयार करना चाहते हैं । लौकिक दृष्टि से शिक्षा के सम्बन्ध में उन्होंने कहा है कि 'हमें ऐसी शिक्षा चाहिए, जिससे चरित्र का गठन हो, मन का बल बढ़े, बुद्धि का विकास हो और व्यक्ति स्वावलम्बी बने।' पारलौकिक दृष्टि से उन्होंने कहा है कि 'शिक्षा मनुष्य की अन्तर्निहित पूर्णता की अभिव्यक्ति है।'

स्वामी विवेकानन्द के शिक्षा दर्शन के आधारभूत सिद्धान्त

स्वामी विवेकानन्द के शिक्षा दर्शन के आधारभूत सिद्धान्त निम्नलिखित हैं:

१. शिक्षा ऐसी हो जिससे बालक का शारीरिक, मानसिक एवं आत्मिक विकास हो सके।

२. शिक्षा ऐसी हो जिससे बालक के चरित्र का निर्माण हो, मन का विकास हो, बुद्धि विकसित हो तथा बालक आत्मनिर्भन बने।

३. बालक एवं बालिकाओं दोनों को समान शिक्षा देनी चाहिए।

४. धार्मिक शिक्षा, पुस्तकों द्वारा न देकर आचरण एवं संस्कारों द्वारा देनी चाहिए।

५. पाठ्यक्रम में लौकिक एवं पारलौकिक दोनों प्रकार के विषयों को स्थान देना चाहिए।

६. शिक्षा, गुरू गृह में प्राप्त की जा सकती है।

७. शिक्षक एवं छात्र का सम्बन्ध अधिक से अधिक निकट का होना चाहिए।

८. सर्वसाधारण में शिक्षा का प्रचार एवं प्रसार किया जान चाहिये।

९. देश की आर्थिक प्रगति के लिए तकनीकी शिक्षा की व्यवस्था की जाय।

१०. मानवीय एवं राष्ट्रीय शिक्षा परिवार से ही शुरू करनी चाहिए।

मृत्यु

उनके ओजस्वी और सारगर्भित व्याख्यानों की प्रसिद्धि विश्चभर में है। जीवन के अंतिम दिन उन्होंने शुक्ल यजुर्वेद की व्याख्या की और

कहा “एक और विवेकानंद चाहिए, यह समझने के लिए कि इस विवेकानंद ने अब तक क्या किया है।” प्रत्यदर्शियों के अनुसार जीवन के अंतिम दिन भी उन्होंने अपने ‘ध्यान’ करने की दिनचर्या को नहीं बदला और प्रात: दो तीन घंटे ध्यान किया। उन्हें दमा और शर्करा के अतिरिक्त अन्य शारीरिक व्याधियों ने घेर रक्खा था। उन्होंने कहा भी था, ‘यह बीमारियाँ मुझे चालीस वर्ष के आयु भी पार नहीं करने देंगी।’ 4 जुलाई, 1902 को बेलूर में रामकृष्ण मठ में उन्होंने ध्यानमग्न अवस्था में महासमाधि धारण कर प्राण त्याग दिए। उनके शिष्यों और अनुयायियों ने उनकी स्मृति में वहाँ एक मंदिर बनवाया और समूचे विश्व में विवेकानंद तथा उनके गुरु रामकृष्ण के संदेशों के प्रचार के लिए 130 से अधिक केंद्रों